आलोचना और विचारधारा

वंदना भारती*

विचारधारा कोट या कुर्ते जैसी कोई चीज़ नहीं है, जब मन किया एक उतारा और दूसरा पहन लिया। मेरे विचार से विचारधारा कुछ दूसरी ही चीज़ है। इसके लिए निष्ठा चाहिए, गहरा आंतरिक विश्वास चाहिए। आलोचना, रचना में व्यक्त और अव्यक मूल्यों तथा विश्वासों की व्याख्या करती है। इस तरह आलोचना एक विचारधारात्मक गतिविधि होती है। आलोचना के विचारात्मक प्रयोग को ध्यान में रखा जाए तो आलोचना के दो रूप सामने आते हैं - वर्चस्ववादी आलोचना और मुक्तकामी आलोचना। वर्चस्ववादी आलोचना समाज और संस्कृति में वर्चस्ववादी संबंधों को बनाए रखने में सहायक अर्थों, मान्यताओं, मूल्यों और विचारों की स्थापना का काम करती है। इसके विपरीत मुक्तकामी आलोचना ऐसे अर्थों, सार्थकताओं और मूल्यों की खोज करती है जो वर्चस्व की प्रकृति को तोड़े। इस प्रक्रिया में मुक्तिकामी आलोचना एक जनोन्मुखी सांस्कृतिक चेतना का निर्माण करती है।

आलोचना वकालत नहीं है। वह सफ़ाई का वकील नहीं है जो मुजरिम को बचाने का काम करे। आलोचना किसी को कटघरे में खड़ा करके उसके खिलाफ़ फैसला भी नहीं सुना सकती। सच तो यह है कि आलोचना का काम है 'देखना' और 'दिखाना'। जो नहीं दिखाई दे रहा है, पर्दे के पीछे जो छिपा है, उस पर्दे को हटाकर दिखा सके कि देखो! सच यहाँ छिपा है। आलोचक का एकमात्र अस्त्र है-उसका लोचन और आज की आलोचना को परंपरा में प्रतीक माध्यम से ही समझना ज़रूरी हो गया है। आलोचना और विचारधारा को अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता। डॉ. मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं ''आलोचना, रचना में व्यक्त और अव्यक्त मूल्यों तथा विश्वासों की व्याख्या करती है। इस तरह आलोचना एक विचारधारात्मक गतिविधि होती है।''[1] हाँ विचारधारा से उनका आशय ऐतिहासिक चेतना से है। ऐतिहासिक चेतना आलोचक के विवेक को ही नहीं, उसकी संवेदनशीलता को भी प्रभावित करती है। जिसे सौंदर्यबोध कहा जाता है उसका भी विचारधारा से एक रिश्ता बनता है। सौंदर्यबोध जीवन विवेक का अंग होता है और जीवन विवेक का सामाजिक विवेक से तथा प्रक्रिया में साहित्य-विवेक इतिहास-विवेक से जुड़कर सामाजिक रूप से सार्थक बनता है। हम जिसे सौंदर्यबोधीय पसंद या चुनाव कहते हैं वह प्राय:

* *हिन्दी अफसर,* मिजोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल, मिजोरम

विचारधारात्मक होता है। इसलिए किसी कविता का एक बिंब एक विचारधारा के लोगों को पसंद आता है तो वह दूसरी विचारधारा वाले लोगों को पसंद नहीं आता। विचारधारा की भिन्नता के कारण ही 'गोदान' में मातादीन और सिलिया का प्रेम प्रसंग कुछ लोगों को महत्वपूर्ण लगता है तो कुछ को वह चिढ़ाता है।

यह स्थिति तो हमारी हिंदी साहित्य की है। अगर अमेरिकी 'नई आलोचना' में विचारधारा और उसकी कार्यशैलियों के इस परीक्षण की रोशनी में झाँकें तो हम पाते हैं कि किसी भी विमर्श की तरह साहित्यालोचना भी एक अर्थवाहक अभ्यास है। साहित्यालोचना का अपना एक निश्चित स्वरूप होता है जो उसे अन्य विमर्शों से अलग करता है, यहाँ तक कि साहित्यिक पाठ से भी जिसके साथ उसका संबंध सबसे प्रगाढ़ है। यही कारण है कि साहित्यालोचक के अभ्यास कार्य को आलोच्य विषय द्वारा प्रस्तावित सीमाओं में बाँधा नहीं जा सकता। ऐसी माँग करने का अर्थ होगा कि हम प्रत्यक्षवादी-अनुभववादी ज्ञानमीमांसा के तर्क को मान लें जो अन्वेषक के ज्ञान के इच्छित विषय (Object of Knowledge) को ही उसकी संपूर्ण ज्ञान प्रक्रिया को संचालित करने वाला कारक बनाकर वैचारिक गवेषणा पर मनमाने ढंग से रोक लगा देता है। प्रारंभिक टी.एस. इलियट से लेकर एफ.आर.लेविस और क्लींथ ब्रूक्स की व्यावहारिक साहित्यालोचना इसी प्रकार की विचारधारात्मक संवृत्ति का उदाहरण है।

साहित्यालोचना की प्रवृत्ति इस अर्थ में भी अपनी मूल सामग्री, यानी साहित्यिक पाठ, की प्रकृति से भिन्न है क्योंकि रचना की व्याख्या उस पाठ्य-पद में निहित एक व्याख्यानित अर्थ का अन्वेषण नहीं, वरन् साहित्यार्थ का सृजन है। संभवतः इसी अंतर की ओर इशारा करते हुए टेरी इगल्टन ने कहा था ''समालोचना किसी पाठ्य-पद के पाठक तक ले जाने वाली उगर नहीं है। पाठ के आत्मबोध की पुनरावृत्ति करना आलोचना का काम नहीं है ..... उसका काम है पाठ को उसके अपने यथार्थ से परिचित कराना, जिसका ज्ञान स्वयं पाठ को नहीं होता या दूसरे शब्दों में, समालोचना के लिए, साहित्यिक वृत्ति का स्वास्थ्य किसी पूर्व निश्चित अर्थ और मूल्यों का संयोजित रूप नहीं है जिस पर से पर्दा उठाना ही समालोचक का कर्त्तव्य है। कहा जा सकता है कि, किसी भी वृत्ति की सर्वोत्तम व्याख्या वह कृति ही हो सकती है और रचनाकार ही अपनी रचना का एकमात्र नाट्यकार होता है। इसलिए जब इलियट कहते हैं कि श्रेयस्कर यही है कि आलोचक और रचनाकार एक ही व्यक्ति हो अथवा जब वे अपनी आलोचनात्मक कृतियों को अपने 'निजी काव्य कार्यशाला''[2] के ''गौण उत्पाद'' (बाई प्रोडक्ट) की संज्ञा देते हैं या जब ब्रूक्स अपने प्रसिद्ध निबंध ''हेरेडी एवं पैराफ्रेसी (Haredi ave Parafrasi)'' में कविता की रूपगत भी और समृद्धि की तुलना में समालोचक के अभ्यास कर्म और उसकी आलोचनात्मक स्थापनाओं की दरिद्रता और असमर्थताओं का उल्लेख करते हैं तो ये विद्वान स्वयं अपनी रूपवादी मान्यताओं की अवमानना करते हुए स्वतंत्र वैचारिक विधा के रूप में साहित्यालोचना का अवमूल्यन ही करते दिखते हैं।

परंतु सच्चाई यह है कि साहित्यार्थ पाठ्य पद की निजी आंतरिक धरोहर नहीं बल्कि एक विशेष प्रकार की अर्थवत्ता है जिसका सर्जक मात्र

रचनाकार नहीं वरन् समालोचक भी है। इसलिए समालोचक अर्थ और मूल्यों का उपभोक्ता नहीं, उनका उत्पादक है। अर्थोत्पादन की इस क्रिया में साहित्यालोचक कभी रचनाकार का संगी होता है और कभी उसका विरोधी। इसी द्वंद्वात्मक क्रिया के भीतर से साहित्यार्थ का जन्म होता है।

साहित्यालोचना और विचारधारा के बीच एक सीधे-सपाट और प्रत्यक्ष किस्म के संबंधों की धारणा के आधार पर उनके संबंधों को जाँचा-परखा नहीं जा सकता। इससे साहित्यालोचना के अपने वैचारिक वैशिष्ट्य और स्वायत्तता का अवमूल्यन होता है। परिणामस्वरूप, साहित्यालोचना के स्वरूप में जो असंतुलन और विखंडन पैदा होते हैं वे उदाहरणार्थ, हिंदी की मार्क्सवादी आलोचना में साफ़ नज़र आते हैं। हिंदी के अधिकतर मार्क्सवादी समालोचक साहित्य-रचना और समालोचनात्मक पाठ में सामाजिक संदर्भ के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। परंतु इस रूप में कि यह संदर्भ बाह्य प्रभाव की शक्ल में बस पाठ की सीमाओं पर मंडराता रहता है, उसके स्वरूप में प्रवेश कर उसकी रूपाकृति के गठन में उसकी कोई खास भूमिका नहीं दिखती। सामाजिक संदर्भ का प्रभाव कारणात्मक होकर रह जाता है, संरचनात्मक नहीं बन पाता। इसीलिए, चाहे शिवदानसिंह चौहान हों या रामविलास शर्मा या नामवर सिंह, बहुधा अपनी जिस आलोचनात्मक कृति में वे मार्क्सवादी दिखते हैं उसमें उनका मार्क्सवाद उनके आस-पास नज़र नहीं आता। कुछ आलोचक समझते हैं कि रचना की भाषा पर बात करने से ही आलोचना की प्रक्रिया पूरी हो जाती है। लेकिन भाषा में भी विचारधारा होती है यह वे नहीं मानते। कभी-कभी रचना में आया एक शब्द रचना के बोध को प्रभावित करता है, वह पाठक की चेतना को विचलित भी करता है। नागार्जुन की एक प्रसिद्ध कविता है 'हरिजन गाथा' उसमें एक जगह आया है–

और, इस तरह जिंदा झोंक दिए गए हों
तेरह के तेरह अभागे मनुपुत्र
सौ-सौ भाग्यवान मनुपुत्रों द्वारा
ऐसा तो कभी नहीं हुआ था .....
ऐसा तो कभी नहीं हुआ था .....

प्रो. पांडेय लिखते हैं ''नागार्जुन के एक काव्यपाठ के दौरान इस अंश को सुनकर कुछ दलितों ने आपत्ति की थी और कहा था कि एक विराट चिताकुंड में दलितों को जिंदा झोंक देने वाले सवर्ण अगर मनुपुत्र हैं तो दलितों को भी मनुपुत्र कहना ठीक नहीं है[2]।

आलोचना के विचारात्मक प्रयोग को ध्यान में रखा जाए तो आलोचना के दो रूप सामने आते हैं-वर्चस्ववादी आलोचना और मुक्तकामी आलोचना। वर्चस्ववादी आलोचना समाज और संस्कृति में वर्चस्ववादी संबंधों को बनाए रखने में सहायक अर्थों, मान्यताओं, मूल्यों और विचारों की स्थापना का काम करती है। इसके विपरीत मुक्तकामी आलोचना ऐसे अर्थों, सार्थकताओं और मूल्यों की खोज करती है जो वर्चस्व की प्रकृति को तोड़े। इस प्रक्रिया में मुक्तिकामी आलोचना एक जनोन्मुखी सांस्कृतिक चेतना का निर्माण करती है। जिसका एक स्पष्ट राजनीतिक अभिप्राय होता है।

'आलोचना और विचारधारा' पूंजीवाद से भी गहरे रूप से प्रभावित हैं। समकालीन विश्व पर विचार करने वाले पूंजीवादी पांडित्य की विशेषता यह है कि वह विचारधारात्मक सहमति को तटस्थ मानने की भूल करता है, पूंजीवाद के स्वरूप पर कोई प्रश्न करने के लिए तैयार नहीं।

जब हम साहित्यालोचन और साहित्य की समझदारी की ओर ध्यान देते हैं तो समाज विज्ञानों के अध्ययन में विचारधारा के गहरे प्रभाव का सापेक्षत: सुस्पष्ट चित्र अनेक कारणों से धुंधला होता दिखाई देता है। साहित्यानुशीलन में विवेकशीलता उनके प्रयत्नों के महत्त्व और उनसे उत्पन्न जागृति को स्वीकार करने के लिए इन आलोचकों द्व ारा स्थापित कला तथा राजनीति के संबंधों को स्वीकार करना किसी के लिए आवश्यक नहीं है। इस प्रकार की आलोचना से जब हम उनके बाद की रूपवादी और जड़ उपदेशवादी आलोचना की तुलना करते हैं तो पाते हैं कि अच्छी आलोचना के लिए एक विशेष राजनीतिक चेतना आवश्यक होती है। संभवत: हमारी सर्वाधिक विचारोत्तेजक आलोचना आर्थिक मंदी और स्टालिनवाद के आघात की देन है न कि रिचर्ड्स और इलियट के सैद्धांतिक प्रयत्नों की।[3]

आधुनिक आलोचना में अंदाजेबयाँ की प्रमुखता, लकीर के फकीर बनने की नीरस प्रवृत्ति और दुर्बोध रीतिबद्ध प्रतिमानों की खोज में खोए रहने की आदत से सभी परिचित हैं। 'नए आलोचक' अपने राजनीतिक दर्द और आडंबरी पवित्रता के कारण दोषी माने जाते हैं, लेकिन यह दोषारोपण गलत है, क्योंकि अधिकांश 'नए आलोचक' अपनी प्रतिबद्धता के प्रति स्पष्ट बोध वाले चिंतक और कलाकार रहे हैं। समकालीन आलोचना में प्रतिबद्धता का अभाव है और विषय क्षेत्र का संकुचन भी। साख पर चलने वाली इस सभ्यता के ताल को सुशोभित करने वाले दमकते हीरों के स्वरूप का विश्लेषण स्पष्ट विवेक के बिना असंभव है।

विशेष मौलिक प्रतिमाएँ भी समय की गति के अनुकूल ही चलने का प्रयत्न करती हैं। आजकल के आलोचक आलोचना की भाषा के नए मुहावरे गढ़ने में व्यस्त हैं और जब उनकी प्रत्येक पुस्तकें उन्हीं मुहावरों से बोझिल दिखाई देती हैं तो प्रतिमा के इस अपव्यय पर आश्चर्य होता है।

अमेरिकी आलोचना के ऊपर लिखते हुए फ्रेडिरिक क्रूज़ लिखते हैं कि ''हमारी अमेरिकी आलोचना इसलिए बेहतर लगती है कि नज़दीक से उसकी परख नहीं होती।''[4] फिर भी यह मान्यता कि साहित्य के अभिप्राय को व्यक्त करना सही और महत्वपूर्ण है। जो आलोचना कक्षाओं की उत्पत्ति के पीछे सक्रिय ऐतिहासिक संघर्ष की अवहेलना करके केवल कलाओं की रूपात्मक सुसंगति, विरोधों के समाधान और इसी प्रकार के आडंबरी विवेक पर बल देती है। वह एक समृद्ध और संस्थापित समाज के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। इस प्रकार की आलोचना निश्चय ही उस आलोचना से कम विचारधारात्मक है जिसमें राजनीतिक विशुद्धता ही सौंदर्यबोधी मूल्य की कसौटी है। लेकिन ऐसी आलोचना में सामाजिक शक्तियों की अवहेलना का भी एक विचारध ारात्मक पहलू है। वह वर्तमान वर्गहीनता के भ्रम पर आश्रित और उसी के पोषण में सहायक भी है। यह एक ऐसा भ्रम है जिसके कारण ही छद्मवेशी वर्ग शासन टिका हुआ है।

संदर्भ

1. मैनेजर पाण्डेय. 2005. *आलोचना की सामाजिकता.* वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ–20.
2. टेरी इगल्टन. 2005. *क्रिटिसिज़्म एंड आइडियोलौजी. संधान,* अंक–4, पृष्ठ–130.
3. मैनेजर पाण्डेय. 2005. *आलोचना की सामाजिकता.* वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ–24.
4. फ्रेडरिक क्रूज़. 1998. *साहित्यानुशीलन में विचारधारा की स्थिति.* उद्धृत संकट के बावजूद, मैनेजर पाण्डेय, 1998 पृष्ठ–175.
5. वही, पृष्ठ–176.

***

विद्ययाऽमृतमश्नुते

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली – 110 016

(शैक्षिक अनुसंधान प्रभाग)

एन.सी.ई.आर.टी. सीनियर रिसर्च एसोसिएटशिप (पूल ऑफिसर) स्कीम

विद्यालय शिक्षा एवं संबंधित विषयों में एन.सी.ई.आर.टी. सीनियर रिसर्च एसोसिएट के पद के लिए भर्ती हेतु आवेदन आमंत्रित किये जाते हैं। पात्रता की योग्यता संबंधित जानकारी हेतु एन.सी.ई.आर.टी. की वेबसाईट www.ncert.nic.in पर देखें। पूर्ण आवेदन अध्यक्ष, शैक्षिक अनुसंधान प्रभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली - 110 016 को भेजे जा सकते हैं। आवेदनों पर वर्ष में दो बार विचार किया जाएगा (31 मई तथा 30 नवंबर अंतिम तिथियाँ होंगी)।